2019

भारत के इतिहास में बहुजनों की सबसे बड़ी लड़ाई

एच.एल. दुसाध

2019
भारत के इतिहास में बहुजनों की सबसे बड़ी लड़ाई

एच. एल. दुसाध

बहुजन डाइवर्सिटी मिशन
नई दिल्ली-110047

प्रथम संस्करण : 2017

प्रकाशक : **बहुजन डाइवर्सिटी मिशन**
एफ-196, आया नगर एक्स, फेज-6, नई दिल्ली-110047
E-mail : hl.dusadh@gmail.com
मो. 9654816191

© **लेखक**

मूल्य : 70.00 रुपये

रचना : 2019 : भारत के इतिहास में बहुजनों की सबसे बड़ी लड़ाई
लेखक : एच. एल. दुसाध
शब्दांकन : कम्प्यूटेक सिस्टम, शाहदरा, दिल्ली-32
आवरण : राकेश यादव
मुद्रक : क्विक ऑफसेट, दिल्ली-110094

सामाजिक न्याय की लड़ाई में
अपनी कमल को तलवार की तरह इस्तेमाल कर रहे
विरल बहुजन चिन्तक ***चन्द्रभूषण सिंह यादव*** *को*

अनुक्रम

अपनी बात 7

अध्याय-1 : आरक्षण के संघर्ष पर केंद्रित : भारत का इतिहास **9**

भाजपा की मूल रणनीति और योगी आदित्यनाथ–9, यह आरक्षण पर संघर्ष का परिणाम है–10, भारत का इतिहास : आरक्षण पर केंद्रित संघर्ष का इतिहास–11, स्वधर्म पालन करवाने के लिए ही राज्य की उत्पत्ति–13, स्वध र्म पालन का आर्थिक निहितार्थ–13, एक आरक्षण व्यवस्था के रूप में क्रियाशील : वर्ण-व्यवस्था–14, वर्ण-व्यवस्था के निर्माण के पीछे साम्राज्यवादी परिकल्पना–15, भारत के इतिहास में संघर्ष का मूल मुद्दा : आरक्षण–16, सामाजिक मर्यादा भी आरक्षित–16, आध्यात्मानुशीलन भी आरक्षित–16, यौन-सुख का अवसर भी आरक्षित–18, धन-धरती पर अधिकार अटूट रखने के लिए : कर्म व वर्ण-शुद्धता का सिद्धांत–18, भारत में दो वर्ग : अल्पजन हिन्दू आरक्षणवादी और वंचित बहुजन समाज–19, बुद्ध के साम्य दर्शन से रचित हुआ : शक्तिमान समाज–19, आरक्षण पर संघर्ष के चलते बौद्ध भारत तब्दील शुंग भारत में–20, इस्लाम भारत के निर्माण में हिन्दू आरक्षण की क्रियाशीलता–21, हिन्दू आरक्षण के कारण कायम हुआ : विदेशागत लोगों का अप्रतिरोध्य शासन–21, भारत में जन्नत का साक्षात रूप देख : मुसलमान विजेता भूले अपना मिशन–22, मुसलमान विजेताओं के सहयोगी बने : ब्राह्मण और क्षत्रिय–22, हिन्दू आरक्षण से निजात के लिए : ब्रिटिशराज का स्वागत–23, आधुनिक भारत के शिलान्यासी : प्लासी युद्ध के अस्पृश्य समरवीर–24, ब्रिटिश शासकों के साथ ब्राह्मणों का तालमेल–25, वर्ण-व्यवस्था के आरक्षणवादी स्वरूप पर आईपीसी का हमला–26, हिन्दू साम्राज्यवाद से लड़ने का मार्ग प्रशस्त किया : लॉर्ड मैकाले–26, हिन्दू आरक्षण की काट के लिए : फुले का बहुजनवादी आरक्षण–27, इतिहास के महानतम नायक : डॉ. आंबेडकर–28, स्वाधीनोत्तर भारत का इतिहास : विशुद्ध आरक्षण पर संघर्ष का इतिहास–29, आंबेडकरोत्तर काल का बहुजन मसीहा : मा. कांशीराम–29, मंडल : आरक्षण के मुद्दे पर सृष्ट हुआ संघर्ष का एक और इतिहास–30, मंडल के खिलाफ शुरु हुआ : आत्मदाह और राष्ट्र का

संपदा-दाह–32, मंडल-2 : सरफरोशी की तमन्ना का सिंहनाद–32, मंडलवादी आरक्षण के विरुद्ध संगठित हुआ स्वाधीनोत्तर भारत का सबसे बड़ा आंदोलन–33, हिन्दू साम्राज्यवाद के खिलाफ : बहुजन एकता–33, हिंदू साम्राज्यवाद के लिए नवसाम्राज्यवाद का स्वागत–34, आरक्षण के खात्मे के लिए जुनून की हद तक मुस्तैद हुए : राष्ट्रवादी–35

अध्याय-2 : बहुजन बुद्धिजीवियों ने शुरू की : सर्वव्यापी आरक्षण की लड़ाई 37

इतिहास के गर्भ से निकला डाइवर्सिटी का मुद्दा–37, भोपाल घोषणा-पत्र–38 दिल्ली घोषणा-पत्र–42, बहुजन डाइवर्सिटी मिशन का घोषणा-पत्र–49

अध्याय-3 : मुमकिन है अप्रतिरोध भाजपा को शिकस्त देना 51

भाजपा को शिकस्त देना पहले से कठिन!–51, नीतीश की पलटी–51, मृतप्राय बहुजन नेतृत्व–52, सावधान! मोदी को सामाजिक न्याय का नया मसीहा बनाने कि तैयारी चल रही है–53, भाजपा की शक्ति के स्रोत–54, बहुजनवादी दलों की शक्ति का स्रोत : सामाजिक अन्याय का शिकार विशालतम आबादी–55, बहुजनों की सापेक्षिक वंचना : भाजपा के खिलाफ साबित हो सकती है बारूद का ढेर!–56, एक ही कमी : योग्य बहुजन नेतृत्व!–57, सापेक्षिक वंचना के सद्व्यवहार के लिए : डाइवर्सिटी–57, सामाजिक अन्यायमुक्त भारत निर्माण बने चुनावी मुद्दा–58, मोदी को सामाजिक न्याय का मसीहा बनाने के मंसूबों पर : डाइवर्सिटी फेर सकती है पानी–58, डाइवर्सिटी बहुजन नेताओं को भारत का ताज पहना सकती है–59, डाइवर्सिटी से और फायदे भी हैं–60, भ्रष्टाचार को कम करने के लिए : डाइवर्सिटी–60, लोकतंत्र की सलामती के लिए : डाइवर्सिटी–61, मुक्कमल महिला सशक्तीकरण के लिए : डाइवर्सिटी–61, सच्चर रिपोर्ट में उभरी मुस्लिम समुदाय की बदहाली की तस्वीर को खुशहाली में बदलने के लिए : डाइवर्सिटी–61, आरक्षण से उपजते गृहयुद्ध के हालात से निजात पाने के लिए : डाइवर्सिटी–62, नक्सलवाद के शमन के लिए : डाइवर्सिटी–62, अस्पृश्यों को हिन्दुओं के अत्याचार से बचाने के लिए : डाइवर्सिटी–62, बहुराष्ट्रीय कंपनियों को रोकने के लिए : डाइवर्सिटी–63, विविधता में एकता को सार्थकता प्रदान करने के लिए : डाइवर्सिटी–63, ब्राह्मणशाही के खात्मे के लिए : डाइवर्सिटी–64

अध्याय-4 : भाजपा और बहुजनवादी दलों की कमियाँ और ताकत 65

कांशीरामवाद पर हेडगेवारवाद की जबरदस्त विजय–65, भाजपा की शक्ति के स्रोत–68, बहुजनवादी दलों की शक्ति का स्रोत : सामाजिक अन्याय का शिकार विश्व का विशालतम समाज–72

अपनी बात

इस देश के जन्मजात वंचितों के नजरिये से यदि स्वाधीनोत्तर भारत के इतिहास का आंकलन करें तो पाएंगे कि हम मोदी राज में निर्विवाद रूप से सबसे भयावह दौर से से गुजर रहे हैं। इस दौर में आजाद भारत की अन्यतम सर्वाधिक शक्तिशाली सरकार जो फैसले ले रहे रही है, वह जन्मजात वंचितों के लिए दुःस्वप्न है। इस दौर में श्रम कानूनों को निरंतर कमजोर एवं नियमित मजदूरों की जगह ठेकेदारी प्रथा लागू कर मजदूर वर्ग को अभूतपूर्व शोषण के दलदल में फंसाया जा रहा है। 'साफ दिख रहा है कि आज भारत की राजनीति पूरी तरह नवउदारवाद के खूनी पंजों में आ चुकी है और देश का शासक वर्ग कार्पोरेट के एजेंट की भूमिका में उतर आया है। जनता का पैसा कार्पोरेट के विकास में लगे और जनता को भान न हो, ऐसी नीतियां बनाई जा रही हैं।' सरकार भारी संख्या में लाभजनक उपक्रमों को निजी हाथों में देने में अभूतपूर्व तत्परता दिखलाने के साथ-साथ बेखौफ होकर सुरक्षा तक से जुड़े उपक्रमों में 100 प्रतिशत एफडीआई लागू कर रही है।

हर साल दो करोड़ नौकरियां दिलाने का वादा कर सत्ता में आई सरकार ने केन्द्र की भर्तियों में 89 प्रतिशत तक की कटौती कर दिया है। बीते मार्च में इसकी पुष्टि करते हुए सरकार की ओर से बताया गया था कि 2013 में 1,51,841 नौकरियां दी गयी थीं,जो 2014 में घटकर 1,26,261 रह गयीं और 2015 में केवल 15,877 लोगों की सीधी भर्ती की गई। सरकार बुलेट ट्रेन की नीव रख दी है किन्तु रेलवे में दो लाख खाली पड़े पद नहीं भर रही है। इस दौर में देश की शान समझी जाने वाली इंडियन एयर लाइन्स और रेलवे स्टेशनों को निजी हाथों में देने की तैयारी शुरू हो चुकी है और सरकारी अस्पतालों, बैंकों, स्कूलों, सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था की हालत सुनियोजित तरीके से पतली की जा रही है ताकि इन क्षेत्रों को निजी हाथों में देने की मांग खुद जनता ही उठाने लगे। इसके लिए सरकार समर्थक बुद्धिजीवी और मीडिया भी माहौल बनाने में जुट गयी है। 'अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण संकेतक हैं नौकरियां हैं, लेकिन हम रोजगार के मौके कम होते देख रहे हैं। सेंटर फॉर मॉनिटरिंग ऑफ इंडियन इकॉनमी की रिपोर्ट के अनुसार जनवरी 2017 से अप्रैल 2017 के दौरान 15 लाख छीन गयीं। सालाना 2 करोड़ नौकरियों पैदा करने के अपने वादे को अनदेखा करते हुए प्रधानमंत्री ने नौकरियां मांगने की बजाय पैदा करने की नसीहत दे डाली है।'

कुल मिलाकर जिस आरक्षण के सहारे मूलनिवासी राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़ रहे थे, उसे 24 जुलाई, 1991 को लागू नव उदारवादी अर्थिनीति के जरिये

कागजों तक सिमटाने का जितना काम नरसिंह राव, अटल बिहारी वाजपेयी और मनमोहन सिंह ने दो दशकों में किया, उतना नरेन्द्र मोदी ने प्रायः तीन वर्षों में कर दिखाया है और यदि वह पुनः सत्ता में आते हैं तो आरक्षित वर्गो का बचा-खुचा संवैधानिक अधिकार पूरी तरह खत्म हो जाना तय है। ऐसी स्थिति में जब यह स्पष्ट हो गया कि यूपी के सीएम योगी आदित्यनाथ के जरिये राम मंदिर का मुद्दा उठाकर संघ परिवार 2019 में मोदी को पुनः सत्ता में लाने की परिकल्पना कर रहा है, तब मैं इस किताब को लाने का संकल्प लिए बिना न रह सका।

वैसे 2019 में मोदी के पुनः सत्ता में आने की सम्भावना से बहुजन डाइवर्सिटी मिशन से जुड़े लोग ही नहीं, तमाम बहुजन बुद्धिजीवी और सामाजिक कार्यकर्त्ता ही त्रस्त हैं। इसीलिए वे भाजपा को पुनः सत्ता में रोकने के लिए तरह-तरह के उपक्रम चला रहे हैं। इसके लिए वे आपसी मतभेद भुलाकर साझा मोर्चा बनाने एवं मिल-बैठकर एजेंडा तय करने का ईमानदार प्रयास करते दिख रहे हैं। किन्तु मेरा भाजपा से त्रस्त बुद्धिजीवियों औए संगठनों से आग्रह है कि बहुजन समाज की बेहतरी और सवर्णवादी सत्ता को रोकने के लिए एजेंडा स्थिर करने में अपनी उर्जा खर्च करने से बचें। उन्हें याद दिलाना चाहूँगा कि अतीत में कुछ संगठनों द्वारा ऐसे निर्भूल एजेंडे तय किये जा चुके हैं, जिनका अनुसरण कर बहुजन समाज अपनी मुक्ति को पूर्णता प्रदान कर सकता है। हमने इस पुस्तक के अध्याय दो में ऐसे ही एजेंडों से लैस ऐतिहासिक भोपाल घोषणा, दिल्ली घोषणा और बहुजन मिशन के एजेंडे से अवगत कराने का प्रयास किया है। जो सचमुच में बहुजन-मुक्ति के प्रति चिंतित हैं, उनसे मेरा आग्रह है कि भविष्य की लड़ाई का निर्भूल एजेंडा तय करने से पहले, वे इस पुस्तक का अध्याय दो मनोयोग पूर्वक एकाधिक बार पढ़ लें।

और अंत में!

आभार प्रकट करता हूं डॉ. संजय पासवान, बुद्ध शरण हंस, डॉ. विजय कुमार त्रिशरण, दिलीप मंडल, सुरेश केदारे, डॉ. जगदीश प्रसाद, बृजपाल भारती, प्रो. वीरभारत तलवार, डॉ. एसएन और पीएल संखवार, डॉ. प्रदीप चौधरी, शीलबोधी, सुदेश तनवर, डॉ. लाल जी प्रसाद निर्मल, डॉ. राजबहादुर मौर्य, राजीव रंजन, डॉ. पीएल आदर्श, डॉ. राजीव कुमार, निर्मल पासवान, ललन कुमार, योगेन्द्र लाल भारती जैसे समाज परिवर्तनकामी हस्तियों का जिनके सहयोग और उत्साहवर्द्धन से बीडीएम के झंडे तले डाइवर्सिटी का वैचारिक आन्दोलन आगे बढ़ रहा है।

जय भीम जय भारत

दिनांक : 26 नवम्बर, 2017 **एच.एल. दुसाध**

अध्याय-1

आरक्षण के संघर्ष पर केंद्रित : भारत का इतिहास

भाजपा की मूल रणनीति और योगी आदित्यनाथ

काबिले गौर है कि 'भाजपा की मूल रणनीति समाज को धार्मिक आधार पर ध्रुवीकृत करने की है। ऐसे काम के लिए उसके सांप्रदायिक एजेंडे में नए-नए मुद्दे जुड़ते जा रहे हैं। अब उसके पास इस तरह के मुद्दों का भण्डार हैं, जिन्हें उसके अलग-अलग नेता, समय-समय पर उठाते रहते हैं। इन नेताओं को अलग-अलग काम सौंपे गए हैं। कुछ विकास की बात करते हैं, कुछ अपरोक्ष रूप से साम्प्रदायिकता फैलाते हैं और तो कुछ खुलेआम अभद्र भाषा में अल्पसंख्यकों के खिलाफ विषवमन करते हैं।' (**सम्पादकीय, देशबंधु, उप्र चुनाव : भाजपा का विघटनकारी एजेंडा, 5 फरवरी, 2017**)। 'विभिन्न समुदायों को धार्मिक आधार पर ध्रुवीकृत करना और हिन्दू समाज में नीची जातियों का निम्न दर्जा बनाये रखना हिन्दू राष्ट्रवाद का प्रमुख एजेंडा है। इसी एजेंडे के तहत, मुस्लिम राजाओं को विदेशी आक्रान्ताओं के रूप में प्रस्तुत कर उनका दानवीकरण किया जाता रहा है। यह भी कहा जाता है कि उन्होंने भारत के लोगों को जबरदस्ती मुसलमान बनाने का प्रयास किया और इसी के नतीजे में जाति प्रथा अस्तित्व में आई। इसी एजेंडे का दूसरा हिस्सा है आर्यों का महिमामंडन और हिन्दू पौराणिक कथाओं की इतिहास के रूप में प्रस्तुति। हाल ही में ब्राह्मणवादी मूल्यों को बढ़ावा देना और दलितों और ओबीसी को राष्ट्रवादी खेमे में शामिल करना भी इसी इस एजेंडे में शामिल हो गए हैं। (**राम पुनियानी, सोशल इंजीनियरिंग के लिए इतिहास से छेड़छाड़, हस्तक्षेप. कॉम, 12 जून, 2017**)। भाजपा की रणनीति में राम मंदिर प्रधान एजेंडा है, खासकर यूपी में। इसलिए 'बाबरी मस्जिद के 24 साल पूरे होने के बावजूद राम अभी भी चुनावी मुद्दा बन जाते हैं। उत्तर प्रदेश की राजनीति जाति और सम्प्रदाय से प्रभावित है। यही कारण है राम का मुद्दा यहाँ हमेशा इस्तेमाल किया जाता है। (**कल्याणी शंकर, मोदी सरकार फिर राम भरोसे, देशबंधु, 22 अक्तूबर, 2016**)। जब भी कहीं चुनाव होता है भाजपा राम मंदिर का विवाद खड़ा कर देती है। (**कुलदीप नैयर, फिर वही मंदिर,**

देशबंधु, 26 अक्तूबर, 2016)। बहरहाल ध्रुवीकरण की रणनीति के तहत जो भाजपा राम मंदिर का मुद्दा हर चुनाव, विशेषकर यूपी में उठाती रही है, उसने योगी आदित्यनाथ को यूपी का सीएम बनाकर, उस मंदिर निर्माण के नेतृत्व का दायित्व उन्हें सौंप दिया है।

'गोरखपुर के सांसद योगी आदित्यनाथ को उत्तर प्रदेश की बागडोर सौंपकर भाजपा आला कमान ने 2019 के लोकसभा चुनाव का एजेंडा तय कर दिया है। योगी को मुख्यमंत्री नामित कर भाजपा ने संकेत दिया है कि अब उसका अगला कदम अयोध्या में राममंदिर का निर्माण होगा। योगी की गिनती कट्टरपंथी हिन्दू नेताओं के रूप में की जाती रही है। हिंदुत्व ही उनका मुख्य एजेंडा रहा है। विधानसभा चुनाव में हिंदुत्व के एजेंडे को धार देने के लिए ही योगी आदित्यनाथ को चुनाव अभियान की कमान सौंपी गयी थी। उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव का नेतृत्व स्वयं प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कर रहे थे। लेकिन योगी ने सबसे अधिक जनसभाएं की थीं। यही नहीं पश्चिम उत्तर प्रदेश में उनकी जनसभाओं में काफी भीड़ देखने को मिली थी। इस भीड़ ने यह साबित कर दिया था कि योगी सिर्फ पूर्वांचल के ही नेता नहीं हैं, बल्कि पूरे प्रदेश में हिन्दू समुदाय ने उन्हें अपना नेता स्वीकार किया है... उनके चयन से अब साफ हो गया है कि योगी अब राम मंदिर आन्दोलन को नयी धार देंगे और बहुसंख्य समाज को भाजपा से जोड़ने का प्रयास जारी रखेंगे। फिलहाल भाजपा ने योदी आदित्यनाथ को मुख्यमंत्री पद के लिए नामित करके 2019 का अपना एजेंडा तय कर दिया है।' (**सुरेश बहादुर सिंह, भाजपा ने तय किया 2019 का एजेंडा, दैनिक जागरण, 20 मार्च, 2017**)। और योगी भाजपा एजेंडा पूरा करने की दिशा में सधे कदम उठा रहे हैं, अयोध्या में ऐतिहासिक दीपोत्सव का सफल आयोजन, उसकी उज्जवल मिसाल है। यही योगी 31 मई को भी अयोध्या पहुंचकर भविष्य का संकेत दे दिए थे।

यह आरक्षण पर संघर्ष का परिणाम है

बहरहाल इस पुस्तक की प्रारंभिक पंक्तियों में जन्मजात वंचितों के लिहाज से जो भयावह तस्वीर उभरी है, उसे आमतौर पर अर्थशास्त्री सरकारों की गलत नीतियों का परिणाम बताकर संतुष्ट हो सकते हैं। पर, क्या सरकारों की गलत नीतियों के चलते ही ऐसा हो गया या इच्छाकृत रूप से ऐसा किया गया! क्या डॉ. आंबेडकर द्वारा लोकतंत्र के ढाँचे के विस्फोटित होने की चेतावनी के बावजूद पंडित नेहरु, जेपी, वाजपेयी इत्यादि से लगाये, 70 सालों में जो नहीं हुआ, वह अब हो रहा है का दावा करने वाले महाशक्तिशाली नरेंद्र मोदी विश्व में सर्वाधिक भीषण रूप में फैली विषमता की समस्या की यूं ही अनदेखी किये जा रहे हैं? क्या नवउदारवादी

अर्थनीति की जिस संगठन के लोग यह कहकर वर्षों से शोर मचाते रहे हैं कि 'अब जो स्थितियां और परिस्थितियां बन या बनाई जा रही है, उसके फलस्वरूप देश आर्थिक रूप से विदेशियों का गुलाम बन जायगा, फिर हमें विदेशियों से स्वंत्रता संग्राम की भांति आर्थिक मुक्ति का संग्राम चलाना पड़ेगा, वैसे संगठन से प्रशिक्षित लोग यूं ही सुरक्षा तक से जुड़े उपक्रमों में 100 प्रतिशत एफडीआई लागू कर रहे हैं? क्या यूं ही श्रम कानूनों को खत्म तथा भर्तियों में 90 प्रतिशत तक की कटौती करने के साथ-साथ ऐसे हालात बनाये जा रहे हैं जिससे एयर इंडिया, बैंक, रेलवे स्टेशन सहित तमाम लाभजनक सरकारी उपक्रम, सरकारी अस्पताल, जेल, स्कूल इत्यादि निजी हाथों में चले जांय? क्या यूं ही हजारों साल से शिक्षालयों से दूर धकेले गए बहुजनों को उच्च शिक्षा से पूरी तरह आउट करने के लिए शिक्षा का दैविक अधिकारी वर्ग सर्वशक्ति लगा रहा है? नहीं! इन सवालों का जवाब और लोग चाहे कुछ भी दें, मेरा अध्ययन कहता है कि यह सब शक्ति के समस्त स्रोतों (आर्थिक-राजनीतिक-धार्मिक-शैक्षिक इत्यादि) पर 80-85 प्रतिशत कब्जा जमाये परम्परागत विशेषाधिकारयुक्त व सुविधाभोगी तबके को और शक्तिसंपन्न तथा मूलनिवासी बहुजनों को पूरी तरह शक्तिहीन करने की सुपरिकल्पित योजना के तहत किया गया है और ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि भारत का इतिहास आरक्षण पर संघर्ष का इतिहास है।'

भारत का इतिहास : आरक्षण पर केंद्रित संघर्ष का इतिहास

सामाजिक परिवर्तन के लिए हर व्यक्ति, समूह और संगठन ने इतिहास से प्रेरणा लेने की कोशिश की है। इस क्रम में उसने मानव के संघर्षों के मूल अंतर्विरोध को समझने की कोशिश की है। जो देश, काल की परिस्थितियों के आधार पर विभिन्न बिन्दुओं पर रहा। लेकिन जो कारण सर्वत्र व्याप्त रहा वह आर्थिक कारण है। अर्थात् दुनिया में सर्वत्र मानव-मानव के बीच लड़ाई का कॉमन कारण संपदा-संसाधनों पर कब्जा जमाना रहा। संभवतः इसीलिए दुनिया के महानतम् विचारक मार्क्स ने कहा कि दुनिया (मानव जाति) का इतिहास वर्ग व आर्थिक संघर्ष का इतिहास है। लेकिन अगर भारत के संदर्भ में इतिहास की विवेचना की जाय तो मानव के परस्पर संघर्षों के कॉमन कारण के अतिरिक्त अन्यान्य कारण भी आरक्षण के साथ जुड़े रहे हैं। ऐसे में कहा जा सकता है कि अगर मार्क्स के अनुसार मानव जाति का इतिहास वर्ग व आर्थिक संघर्ष का इतिहास है तो भारत में वह संघर्ष आरक्षण पर संघर्ष का ही इतिहास है। और अगर भारत का इतिहास आरक्षण पर संघर्ष का इतिहास है तो वह मूलतः वर्ण/जातीय संघर्ष का इतिहास है। क्योंकि फुले से लेकर कांशीराम तक सामाजिक परिवर्तन के तमाम महानायकों ने भारत के

इतिहास को मूलतः वर्ण/जाति पर केन्द्रित संघर्ष का ही इतिहास बताया है। बाबा साहेब का भी मत इससे भिन्न नहीं था। उन्होंने भारत का इतिहास बौद्ध और हिन्दू संस्कृति के मध्य संघर्ष का इतिहास बताया है। चूंकि हिन्दू संस्कृति वर्ण-व्यवस्था की पोषक व बौद्ध संस्कृति वर्ण-व्यवस्था विरोधी है इसलिए वह भी वर्ण-व्यवस्था के केन्द्रित संघर्ष का इतिहास हुआ। इस तरह हम मान सकते हैं कि डॉ. आंबेडकर की भारतीय इतिहास पर परिभाषा भी फुले और कांशीराम से बहुत भिन्न नहीं थी। ऐसे में अगर भारत का इतिहास वर्ण-व्यवस्था पर संघर्ष का इतिहास है तो वर्ण-व्यवस्था क्या है?

वर्ण-व्यवस्था क्या है, इसकी एक सुनिर्दिष्ट परिभाषा तय नहीं हो पाई है लेकिन हिन्दुओं के लिए इसका महत्त्व अमापनीय रहा है। इसके गुरुत्व से अभिभूत होकर ही स्वामी विवेकानंद ने वर्ण-व्यवस्था को मानव को ईश्वर प्रदत्त सर्वश्रेष्ठ उपहार कहा है। यह वह धर्माधारित विधान है जिसका अनुसरण कर सुप्राचीन काल से ही हिंदू अपनी जीवन पद्धति परिचालित एवं मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करते रहे हैं। वर्ण-व्यवस्था के अनुसार आचरण के लिए मानव को प्रेरित करना ही वैदिक काल से धर्मशास्त्रों का लक्ष्य रहा है। प्राचीन भारतीय धर्मशास्त्र प्रणेताओं का ऐसा मत रहा है कि प्राणीमात्र का कल्याण उनके स्वधर्म-पालन में निहित है। इस जगती-तल पर जब प्रत्येक प्राणी स्वधर्म पालन में संलग्न रहता है, उसके नियमों का उल्घंन करने की चेष्टा नहीं करता, तब जगत में सुख और शांति की वर्षा होती रहती है। प्रत्येक प्राणी सुखी और सन्तुष्ट होकर परस्पर सहयोग एवं सद्‌भावना से जीवन व्यतीत करता हुआ, अपने परम ध्येय (मोक्ष) की प्राप्ति में तत्पर रहता है और इस प्रकार द्वन्द्वमय जगत से निवृत्त होकर अनन्त आनन्द का भोग करने का अधिकारी बन जाता है।

धर्मशास्त्र संबंधी संस्कृत-साहित्य इस तथ्य की पुष्टि करता है कि मनु धर्मशास्त्र के आदि प्रणेता हुए। धर्मशास्त्र संबंधी संपूर्ण ज्ञान मानव के कल्याण हेतु सर्वप्रथम ब्रह्मा से मनु ने प्राप्त किया था। मानव धर्मशास्त्र में मनु ने स्वयं कहा है— 'ब्रह्मा ने धर्मशास्त्र की रचना कर वह धर्मशास्त्र मुझे दिया। इसके उपरान्त मैंने यह धर्मशास्त्र मरीचि आदि ऋषियों को दिया।' फिर मनु के शिष्य भृगु ने इस धर्मशास्त्र का ज्ञान अन्य द्यके ऋषि मुनियों को दिया। नारद-स्मृति में इसका समर्थन करते हुए नारद कहते हैं, 'मनुष्य मात्र के आचरण हेतु स्वयंभू भगवान मनु ने उन पर अनुग्रह कर, इस लोक में उनके लिए धर्मशास्त्र की रचना की।' इन सब प्रमाणों के आधार पर यह स्पष्ट है कि मनु धर्मशास्त्र के आदि प्रणेता हैं।

बहरहाल अन्य भारतीय धर्मशास्त्र प्रणेताओं की भांति ही आदि प्रणेता मनु का यह मानना रहा है कि प्राणीमात्र का कल्याण ही स्वधर्म पालन में है, पर मनुष्य समाज ऐसे प्राणियों से बना है, जिनमें स्वधर्म परायणता दुर्लभ है। इसलिए इन अशुचि, अधर्मपरायण प्राणियों को स्वधर्म-पालन के निमित्त बाध्य करने के लिए उन्हें दण्डित

करना परमावश्यक है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु उन्होंने दण्डविधान की व्यवस्था दी। मनु के अनुसार दण्ड का सर्जन ईश्वर ने स्वयं किया। इस प्रकार मनु के मतानुसार धर्म और दण्ड दोनों की उत्पत्ति साथ-साथ हुई है और दण्ड का उद्देश्य धर्म संस्थान एवं धर्मरक्षा है। मनु ने धर्मरक्षा हेतु जो दण्डनीति बनाई, वही राजशास्त्र अर्थात् राजधर्म के रूप में मान्य हुई।

स्वधर्म पालन करवाने के लिए ही राज्य की उत्पत्ति

'प्राचीन भारत में राज्य की उत्पत्ति का एकमात्र उद्देश्य धर्म-संस्थापन बतलाया गया। इस धरा पर प्रत्येक प्राणी स्वधर्म पालन सम्यक प्रकार करता रहे, जगत में धर्मसंकरता उत्पन्न न होने पाये-बस यही राज्य का एकमात्र कर्तव्य बतलाया गया है। इसलिए प्राचीन राजशास्त्र धर्मानुप्राणित है। धर्म से पृथक रहकर भारतीय राजशास्त्र धर्म के अधीन माना गया है। इस दृष्टि से प्राचीन राजशास्त्र अर्थात् राजधर्म का अस्तित्व नहीं रहा। लेकिन यह सोचना गलत होगा कि धर्म और राजधर्म का सहअस्तित्व मात्र प्राचीन भारत में रहा। कुछ हद तक बौद्ध भारत को छोड़कर यह स्थिति लार्ड मैकाले की आईपीसी लागू होने के पूर्व तक रही। हां, मनु के विषय में धर्मज्ञों की आम राय है कि 'उनके द्वारा प्रतिपादित आवयिक सिद्धांत का आदिस्रोत ऋग्वेद की वे ऋचायें हैं, जिनमें विराट पुरुष से मानव समाज के निर्माण की कल्पना की गई है। और जिसमें एक से अनेक के उत्पन्न होने और पुनः अनेक से एक में लय होने के सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है।' बहरहाल वर्ण-व्यवस्था की अहमियत को समझने के लिए उस स्वधर्म का निहितार्थ जानना आवश्यक है जिसके अनुपालन को ही धर्मशास्त्र के प्रणेताओं ने प्राणीमात्र का कल्याण घोषित किया एवं जिसके लिए सुदूर अतीत में, आधुनिक भारत के राजधर्म (आंबेडकरी संविधान) की भांति ही प्राचीन काल में मनु के विधान (राजधर्म) का प्रवर्तन हुआ।

स्वधर्म पालन का आर्थिक निहितार्थ

दरअसल जिसे धर्मशास्त्रों में स्वधर्म का पालन कहा गया है, वह मानव मात्र का धर्म नहीं, बल्कि हिन्दू ईश्वर (विराट पुरुष) के विभिन्न अंगों से जन्मे प्रधानतः चार वर्ण के अलग-अलग मानव समूहों का धर्म है। स्वधर्म पालन के नाम पर चार वर्णों में बंटे मानव समूहों के लिए भिन्न-भिन्न कर्म/पेशे (वृत्तियां) धर्मशास्त्रों द्वारा स्थिर किये गए। इनमें ब्राह्मण वर्ण के मानव समूहों का धर्म अध्ययन-अध्यापन, पौरोहित्य, राज्य संचालन में मंत्रणादान; क्षत्रियों का धर्म भूस्वामित्व, शासन-प्रशासन व सैन्य संचालन इत्यादि तो वैश्यों का धर्म पशुपालन, व्यवसाय-वाणिज्य का कार्य संपादित करना रहा। स्वधर्म पालन में हिन्दू ईश्वर के जघन्य अंग, पैर से जन्मे बहुसंख्यक लोगों का धर्म रहा ऊपर के तीन वर्णों में अवस्थित मानव समूहों की

निःशुल्क सेवा। चूंकि धर्मशास्त्रों के प्रणेताओं की दृढ़ मान्यता थी कि केवल स्वधर्म पालन द्वारा ही जगत में सुख और शांति की वर्षा करायी जा सकती है; प्रत्येक प्राणी सुखी और संतुष्ट होकर परस्पर सहयोग एवं सद्भावना से जीवन व्यतीत करता हुआ मोक्ष की ओर प्रवृत्त हो सकता है एवं द्वन्द्वमय जगत से निवृत्त होकर अनंत आनन्द का भोग करने का अधिकारी बन सकता है; इसलिए उन्होंने कुछ ऐसे नियमों-साधनों और उपायों का प्रावधान किया, जिससे लोग किसी भी सूरत में स्वधर्मपालन से विच्युत न हो सकें। ये नियम, उपायादि ही वर्ण-व्यवस्था बने जिसमें किसी के लिए भी स्वधर्म विच्युति अर्थात् धर्म संकरता घटित करने का कोई अवसर नहीं रहा। स्वामी विवेकानंद जैसे जिन हिन्दुओं ने आत्मा (मनुष्यों) का चरम लक्ष्य परमात्मा (विराट पुरुष/ईश्वर) में विलीन होना अर्थात् मोक्ष प्राप्त करना ही मान लिया, उन्होंने सर्वोत्तम लक्ष्य मोक्ष में वर्ण-व्यवस्था को सहायक मानकर इसे मानव को ईश्वर प्रदत्त सर्वश्रेष्ठ उपहार घोषित कर दिया। लेकिन प्राचीन काल के धर्मशास्त्र प्रणेताओं से लेकर आधुनिक भारत के आध्यात्मिक, राजनैतिक और शैक्षणिक जगत में छाये मोक्षकामी विवेकानंदों ने अगर काल्पनिक पारलौकिक सुख का चश्मा हटाकर, वर्ण-व्यवस्था के लौकिक प्रभाव का आंकलन किया होता तो उन्हें यह मानव जाति को ईश्वर प्रदत्त सर्वश्रेष्ठ उपहार नहीं, सबसे बड़ा अभिशाप और एक ऐसी आरक्षण व्यवस्था नजर आती जिसमें मूलनिवासी आबादी के लिए भौतिक सुखों का कोई अवसर नहीं रहा।

एक आरक्षण व्यवस्था के रूप में क्रियाशील : वर्ण-व्यवस्था

वास्तव में जिस स्वधर्म पालन में हिन्दुओं को सक्षम बनाने में वर्ण-व्यवस्था की प्रशंसा की जाती है, उस स्वधर्म को इतिहास की भौतिकवादी अभिधारणा और मूलनिवासियों की नजरों से देखने का गंभीर प्रयास नहीं हुआ। अगर हुआ होता तो लगभग तीन साढ़े तीन हजार वर्षों से स्वधर्म पालन के नाम पर, मूलनिवासियों के रूप में, मानव संसाधन की विपुल बरबादी देखकर दुनिया सकते में आ जाती। विगत दशकों से वर्ण-व्यवस्था पर मानवाधिकार प्रेमियों की नजर पड़ने के बावजूद इसका मानव संसाधन हननकारी रूप पूरी तरह उजागर होना बाकी है। बहरहाल स्वधर्म पालन के लिए वर्ण-व्यवस्थाधारित राजधर्म लागू होने के फलस्वरूप जिस वर्ण के लिए धर्म पालन के नाम पर जो कार्य निर्दिष्ट किये गये, वे कर्म चिरकाल के लिए ही उसके लिए आरक्षित होकर रह गये। ऐसे में स्वधर्म पालन करवाने के उद्देश्य से प्रवर्तित वर्ण-व्यवस्था मूलतः एक आरक्षण व्यवस्था में क्रियाशील होने के लिए अभिशप्त हुई। इस आरक्षण व्यवस्था में स्वधर्म पालन के नाम पर चौथे वर्ण के अन्तर्गत आने वाले शूद्रातिशूद्रों के लिए ब्राह्मणों के आरक्षित पेशों अध्ययन-अध्यापन,

पौरोहित्य और राज्य संचालन में मंत्रणादान इत्यादि; क्षत्रियों के लिए आरक्षित शासन-प्रशासन, भू-स्वामित्व व सैन्यवृत्ति एवं वैश्यों को अपनाने का कोई अवसर ही नहीं रहा। आरक्षणवादी वर्ण-व्यवस्था के चलते शूद्रातिशूद्र चिरकाल के लिए शिक्षाहीन, भूमिहीन, व्यवसाय, वाणिज्यहीन बनने के लिए अभिशप्त हुए।

वर्ण-व्यवस्था के निर्माण के पीछे साम्राज्यवादी परिकल्पना

बहरहाल वर्ण-व्यवस्था का एक आरक्षण व्यवस्था में तब्दील होना महज संयोग नहीं रहा। इसे बहुत ही सुपरिकल्पित तरीके से एक आरक्षण-व्यवस्था का रूप दिया गया, इस तथ्य का सुराग हम पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा वर्ण-व्यवस्था के निर्माण के पीछे की गई इस टिप्पणी को पकड़कर पा जाते हैं। 'वर्ण-भेद, जिसका मकसद आर्यों को अनार्यों से जुदा करना था, अब खुद आर्यों पर अपना यह असर लाया कि ज्यों-ज्यों धंधे बढ़े और इनका आपस में बंटवारा हुआ, त्यों-त्यों नए वर्गों ने वर्ण या जाति की शक्ल ले ली। इस तरह, एक ऐसे जमाने में, जब फतह करने वालों का यह कायदा रहा कि हारे हुए लोगों को या तो गुलाम बना लेते थे, या उन्हें बिल्कुल मिटा देते थे, वर्ण-व्यवस्था ने एक शांतिवाला हल पेश किया और धंधों के बंटवारे की जरूरत से इसमें वैश्य बने, जिनमें किसान कारीगर और व्यापारी लोग थे; क्षत्रिय हुए जो हुकूमत करते या युद्ध करते थे; ब्राह्मण बने जो पुरोहिती करते थे, विचारक थे, जिनके हाथ में नीति की बागडोर थी और जिनसे यह उम्मीद की जाती थी कि वे जाति के आदर्शों की रक्षा करेंगे। इन तीनो वर्णों से नीचे शूद्र थे, जो मजदूरी करते और ऐसे धंधे करते थे, जिनमें खास जानकारी की जरूरत नहीं होती और जो किसानों से अलग थे। कदीम वाशिदों से भी बहुत से इन समाजों में मिला लिए गए और उन्हें शूद्रों के साथ इस समाज व्यवस्था में सबसे नीचे का दर्जा दिया गया।'

वास्तव में आर्यों ने वर्ण-व्यवस्था को जो आरक्षण का रूप दिया, उसे विजेता का धर्म भी कहा जा सकता है। इतिहास के हर काल में साम्राज्यवादी विदेशागतों ने पराधीन बनाये गये मूलनिवासियों के देश की संपदा-संसाधनों को अपने कब्जे में करने और उनको दास के रूप में इस्तेमाल करने का अपने-अपने तरीके से उद्योग किया है। साढ़े तीन हजार वर्ष पूर्व भारत पर कब्जा जमाये आर्यों ने विजेताओं की स्वाभाविक आंकांक्षा को पूरा करने के लिये वर्ण-व्यवस्था को माध्यम बनाया। ऐसे में अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए वर्ण-व्यवस्था को आरक्षण व्यवस्था के रूप में तब्दील करने से श्रेयक्रम उनके लिए कुछ और हो ही नहीं सकता था। सचमुच चिरकाल से ही भारत का अर्थतंत्र उस वर्ण-व्यवस्था में प्रवाहमान रहा है जो मूलतः संपदा संसाधनों की वितरण व्यवस्था है और जिसमें समाज के विभिन्न समूहों के आर्थिक कार्यकलाप आरक्षित रहे हैं।

भारत के इतिहास में संघर्ष का मूल मुद्दा : आरक्षण

वर्ण-व्यवस्था का आर्थिक स्वरूप जानने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि भारतवर्ष के इतिहास में अंतर्विरोध और संघर्ष का मूल मुद्दा आरक्षण ही रहा है। ऐसे में कहा जा सकता है कि कार्ल मार्क्स के अनुसार अगर मानव जाति का इतिहास वर्ग संघर्ष और आर्थिक संघर्ष का इतिहास है तो विश्व के एकमात्र जाति समाज वाले देश भारत का इतिहास 'आरक्षण' पर संघर्ष का इतिहास है। लेकिन कार्ल मार्क्स ने मानवजाति के इतिहास में मूल अन्तर्विरोध की पहचान करते हुए विश्व के इतिहास को आर्थिक संघर्ष पर केंद्रित करने की जो बौद्धिक कवायद की, वह निर्विवाद रूप से सत्य होने के बावजूद कुछ लोगों के लिए आपत्तिजनक भी हो सकता है। लेकिन दुराग्रह से परे अगर मुक्तभाव से भारत के इतिहास को परिभाषित किया जाय तो आरक्षण पर केंद्रित संघर्ष से भिन्न हो ही नहीं सकता। क्योंकि जिन-जिन खास विषयों को लेकर मानव-मानव में संघर्ष होता है, भारत में वे सब चीजें वर्णवादी आरक्षण के संग अन्तर्गुन्थित रही हैं।

सामाजिक मर्यादा भी आरक्षित

मसलन सामाजिक मर्यादा को लिया जाय। यह समय-समय पर संघर्ष का एक बड़ा मुद्दा बन जाती है। भारत में यह सामाजिक व मानवीय मर्यादा भी वर्ण-व्यवस्था (आरक्षण व्यवस्था) में अन्तर्निहित रही। जो सामाजिक समूह जितना ही उच्चतर वर्ण में अवस्थित रहता है, वह उतना ही इस लिहाज से समृद्ध है, जबकि निम्नतर वालों की स्थिति विपरीत है। सामाजिक मर्यादा वर्णानुक्रम में आरक्षित रहने के कारण शूद्रातिशूद्र जितना भी आर्थिक उपलब्धि कर लें, वे कंगाल बाबाजी या बाबू साहेब के समक्ष नतमस्तक रहने के लिए बाध्य रहते हैं। भारत के जाति समाज को छोड़कर विश्व में अन्यन्त्र ऐसी स्थिति कत्तई नहीं रही। विश्वमय फैले श्रेणी समाजों में सामाजिक मर्यादा के निर्धारण में व्यक्ति/सामाजिक समूहों की आर्थिक उपलब्धि व उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व की मात्रा ही निर्णायक रोल अदा करती रही है। इसलिए भारत के इतिहास में सामाजिक मर्यादा अगर संघर्ष का कोई मुद्दा रहा तो वह भी वर्णवादी आरक्षण से ही अविच्छिन्न रूप से जुड़ा रहा।

आध्यात्मानुशीलन भी आरक्षित

अब आया जाय धर्म पर। भारत के वर्ण-व्यवस्थाधारित समाज में धर्म अगर संघर्ष का कोई मुद्दा रहा, तो वह भी आरक्षण से परे नहीं रहा। इस क्षेत्र में आरक्षण जबरदस्त तरीके से प्रभावी रहा है। वर्ण-धर्म अर्थात् हिन्दू धर्म को छोड़कर अन्यान्य संगठित धर्मों में सबके लिए आध्यात्मानुशीलन का पूर्ण अधिकार के साथ-साथ;

प्रयास करके मौलवी, फादर, ग्रंथी-ज्ञानी इत्यादि बनने का अवसर मुक्त रहा है, पर वर्णवादी समाज में नहीं। भारत में पंडा, पुरोहित, शंकराचार्य कौन बनेगा, यह अधिकार वर्णवादी आरक्षण से जुड़ा है। इस क्षेत्र में आरक्षण के सर्वशक्ति से क्रियाशील रहने के कारण शूद्र साधक विवेकानंद सर्वश्रेष्ठ धर्मज्ञ के खिताब से नवाजे जाने के बावजूद भारत के किसी धाम का शंकराचार्य न बन सके। यही नहीं धर्म के क्षेत्र में जारी आरक्षण के चलते इस देश की 80-90 प्रतिशत आबादी मोक्ष अर्थात् पारलौकिक सुख के लिए आध्यात्मानुशील के अवसर से धर्मादिशों द्वारा पूरी तरह वंचित रही।

आज आध्यात्म के क्षेत्र में बाबा रामदेव, धर्मेन्द्र स्वामी जैसे शूद्रों; उमा भारती, ऋतम्भरा जैसी शूद्राणियों का उदय और देवालयों में कोटि-कोटि शूद्रातिशूद्र भक्तों की भीड़ देखकर कोई इस बात पर विश्वास नहीं करेगा कि हिन्दू धर्म उर्फ वर्ण-धर्म के अन्तर्गत आने वाली 85 प्रतिशत आबादी ही धार्मिक अनुशीलन के अधिकार से पूरी तरह वंचित है। पर, यह सच्चाई है कि वर्ण-धर्म रामदेव और उमा भारती के भाई-बहनों को मोक्ष के लिए पूजा-पाठ की पूरी तरह मनाही करता है। अगर हिन्दू धर्मशास्त्रों में कुछ सच्चाई है तो पूजा-पाठ करने वाले शूद्रातिशूद्रों को नरक के सिवाय कुछ मिल ही नहीं सकता। शास्त्रों ने इन्हें मात्र तीन ऊपरी वर्णों के लोगों की निष्काम सेवा में ही मोक्ष ढूंढ़ने का निर्देश दे रखा है। लेकिन जो लोग ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा छोड़कर राम, कृष्ण, वैष्णो देवी इत्यादि की सेवा कर पुलकित हो रहे हैं, वे सिर्फ आंबेडकर प्रवर्तित संविधान प्रदत्त अवसरों का दुरुपयोग कर रहे हैं। भारत में जब मैकाले की आईपीसी और डॉ. आंबेडकर का संविधान लागू होने के पूर्व मात्र मनु का संविधान प्रभावी था, तब तुकाराम, नंदनार, रैदासों को अपनी आध्यात्मिक प्यास बुझाने के लिए वैकल्पिक रास्तों का अवलम्बन करना पड़ा था।

हिन्दू धर्म में पिच्चासी प्रतिशत आबादी के लिए ही अध्यात्मानुशीलन की मनाही मानव सभ्यता के इतिहास की एक विरल घटना है। जो लोग यह मानते हैं कि आर्य विदेशी नहीं थे, वे जरा ऐसी निर्मम निषेधाज्ञा जारी होने के पीछे क्रियाशील मनोविज्ञान का खुलासा करें। इसके पीछे का मनोविज्ञान वर्ण-व्यवस्था के प्रवर्तकों की विदेशी मानसिकता की स्पष्ट झलक देता है। वर्ण-व्यवस्था के प्रवर्तकों ने, जो कि विदेशागत लोग थे, वर्णवादी आरक्षण के माध्यम से सारी भौतिक सुविधाएं आरक्षित करने के बाद, पराधीन बनाई गई पूरी मूलनिवासी समाज की भावी पीढ़ी को अपने वंशधरों की निःशुल्क सेवा में लगाने के लिए प्रावधान किया था कि शूद्र मोक्ष के लिए हरि सेवा नहीं, उच्चतर वर्णों की सेवा करे। पूरी दुनिया के इतिहास में पराधीन मूल निवासियों के साथ वैसा व्यवहार नहीं हुआ जैसा कि आर्य साम्राज्यवादियों ने किया। ईसाई और इस्लामी शासकों ने तो गुलाम बनाये गये लोगों को सत्ता तक भी सौंपा, पर आर्यों ने...

यौन-सुख का अवसर भी आरक्षित

अब आया जाय नारियों पर। लोग कहते हैं मानव जाति के इतिहास में धन-धरती के बाद यौनकामना की सिद्धि के लिए नारियों के नाम पर सर्वाधिक खून बहे। अगर भारत में यह संघर्ष का मुद्दा रहा तो इसके तार भी हिन्दू आरक्षण से जुड़े हैं। वर्ण-व्यवस्था में अनुलोम विवाह की कठोरतापूर्वक निषेधाज्ञा और प्रतिलोम विवाह की शास्त्र सम्मतता के रास्ते ब्राह्मणों को निज वर्ण के साथ नीचे की तीन; क्षत्रियों को निज वर्ण के साथ नीच की दो और वैश्यों को निजवर्ण के साथ शूद्रातिशूद्र समाज की महिलाओं को ही पत्नी/उपपत्नी बनाकर यौन लालसा चरितार्थ करने का अवसर प्रदान किया जाता रहा। इस मामले में 85 प्रतिशत वाले ऊपरी तीन वर्णों के लोगों को सिर्फ ईर्ष्या करने के लिए अभिशप्त रहे।

उपरोक्त तथ्यों की रोशनी में यह सुस्पष्ट है कि भारत में अन्तर्विरोध व संघर्ष के सारे के सारे मुद्दे चाहे सामाजिक हों, आध्यात्मिक या आर्थिक, हिन्दू आरक्षण (वर्ण-व्यवस्था) से अन्तर्ग्रंथित रहे। ऐसे में भारतवर्ष का इतिहास चीख-चीख कर कह रहा है कि यह आरक्षण पर संघर्ष का इतिहास है। वर्णवादी आरक्षण, जिसमें संपदा-संसाधनों, उच्चमान के लाभकारी पेशों; मोक्ष के लिए हरि सेवा के साथ बाबाजी, बाबू साहेब, सेठजी के रूप में अमापनीय सामाजिक मर्यादा सिर्फ हिन्दू आरक्षणवादियों के लिए रिजर्व रही, वह कैसे हजारों साल से अटूट रही है?

धन-धरती पर अधिकार अटूट रखने के लिए : कर्म व वर्ण-शुद्धता का सिद्धांत

धन-धरती और तमाम भौतिक सुख सुविधाएं अपने वंशधरों को आरक्षित करने के लिए वर्ण-व्यवस्था के प्रवर्तक विदेशागत आर्य मनीषी सिर्फ कर्म-शुद्धता को अनिवार्य व कर्म-संकरता (पेशों की विचलनशीलता) को निषेध कर ही संतुष्ट न हो सके। उन्हें भय था कि दैविक दास में परिणत की गई मूलनिवासी आबादी सिर्फ नरक के भय से चिरकाल के लिए वितरणहीनता की स्थिति नहीं झेल सकती; समय आने पर वह खोई हुई संपदा-संसाधनों पर कब्जा जमाने के लिए संगठित होकर हिन्दू आरक्षणवादियों पर आक्रमण कर सकती है। ऐसे में उन्होंने कर्म शुद्धता के साथ वर्ण-शुद्धता का सिद्धांत भी रचा। वर्ण-व्यवस्था को प्रत्येक आक्रमण से पूर्णरूपेण सुरक्षित रखने के लिए उन्होंने बहुत से सहायक उपादानों को सामाजिक व्यवस्था में तब्दील कर दिया। मूलनिवासी शूद्रातिशूद्रों के लिए शिक्षा व शस्त्र स्पर्श निषेध; नारियों के लिए सती-विधवा और बालिका विवाह प्रथा के साथ अतिशूद्रों के लिए अछूत प्रथा, जो परवर्तीकाल में विराट सामाजिक समस्याएं बनीं, का निर्माण महज वर्ण-व्यवस्था को दीर्घायु बनाने के लिए किया था। वर्ण-व्यवस्था को अमरत्व प्रदान करने वाले उपायों से जरूर सामाजिक समस्याओं का उद्‌भव हुआ, पर वास्तव में ये

गौण रही हैं, मुख्य समस्या आर्थिक रही है। क्योंकि संपदा-संसाधनों पर कब्जा जमाने के लिए ही हजारों सालों से शूद्रातिशूद्रों और नारियों के मानवीय अधिकारों के साथ होली खेली गयी। इस आरक्षण के वर्ण जाति/उपजाति में बंटे हिन्दू समाज को पूरी तरह प्रभावित करने के कारण भारत में जातीय संघर्ष का बोलबाला रहा एवं हजारों भागों में बंटे इस समाज के प्रत्येक विभाजन के मध्य परस्पर शत्रुता और घृणा की व्याप्ति रही; इसके कारण ही समग्र वर्ग की चेतना से कंगाल होने के लिए हिन्दू अभिशप्त हुए।

भारत में दो वर्ग : अल्पजन हिन्दू आरक्षणवादी और वंचित बहुजन समाज

बहरहाल वर्ण-व्यवस्था के निर्माण के पीछे विदेशी आक्रान्ताओं की सम्पूर्ण भूमिका को देखते हुए हमारा मानना है कि इसे एक आरक्षण व्यवस्था का रूप देने के पीछे उनका मुख्य लक्ष्य संपदा-संसाधनों पर कब्जा जमाना और मूलनिवासियों को इससे पूरी तरह वंचित करना था। इसलिए उन्होंने भारत के पूरे अर्थतंत्र को प्राचीनतम् आरक्षण में प्रवाहमान बनाये रखने का सफल उद्योग किया। ऐसे में अगर मार्क्स यह कहते हैं कि मानवजाति का इतिहास वर्ग संघर्ष और आर्थिक संघर्ष का इतिहास है तो, वह यूनिवर्सल सच्चाई भारत में आरक्षण (वर्ण-व्यवस्था) पर संघर्ष में ही प्रतिबिम्बित होती है। अगर भारत में वर्ग की बात की जाय तो वह वर्ग यहां आर्य और मूलनिवासी, अल्पजन हिन्दू आरक्षणवादी और वंचित बहुजन समाज के रूप में दिखता है। बहुजनों और अल्पजनों के बीच संपदा और संसाधनों पर एक तरफ पुनः कब्जा जमाने और दूसरी तरफ कब्जे को बरकरार रखने का संघर्ष सदियों से होता आया है जिसकी शुरूआत बौद्ध भारत से होती है।

बुद्ध के साम्य दर्शन से रचित हुआ : शक्तिमान समाज

इतिहास बतलाता है कि भारत के अधिकांश उपजाऊ भू-भाग पर आधिपत्य कायम करने के बाद आर्यों ने वैदिक काल में वर्ण-व्यवस्था की मुक्कमल स्थापना कर शूद्रातिशूद्रों को दैविक दास बनाकर उन्हें निःशुल्क सेवक के रूप में परिणत कर लिया। वैदिक भारत में स्थापित वर्ण-व्यवस्था को पहली बार बलिष्ठ चुनौती बौद्ध भारत में मिली, जब गौतम बुद्ध के प्रयत्नों से वर्ण-व्यवस्था शिथिल हुई। वर्ण-व्यवस्था के शिथिल होने का मतलब सामाजिक, आध्यात्मिक और आर्थिक आरक्षण में शिथिलता आना हुआ। इसका प्रभाव इतिहास पर क्या पड़ा, यह सुप्रसिद्ध इतिहासकार एस.के. विश्वास की इस टिप्पणी में देखा जा सकता है— 'करुणाधन बुद्ध का अबाध मुक्त ज्ञानानुशीलन मुक्त किया मानव के भाग्य विकास को। मुक्तज्ञान आत्मा का निर्वाण लाभ, युक्त किया ज्ञान के साथ प्रेम। इसलिए आर्यीकृत ब्राह्मणवादी वर्ण-वित्त संरचित जड़ समाज के पास ही, अव्याहत रूप से ध्वनित हुआ जातिहीन

Continue Your Reading Journey

This preview has ended. Access the complete library and support our mission.

Join Our Inclusive Reading Community

✓ We champion diverse voices and perspectives
✓ Your support helps amplify underrepresented authors
✓ We provide free access to educational institutions
✓ Building bridges through shared stories
✓ Creating space for all narratives to be heard

Support Our Mission

Your donation enables us to:
• Curate diverse book collections
• Support authors from marginalized communities
• Provide free resources to educators
• Maintain our accessible digital library

Visit: www.diversitymission.in

Sign the diversity pledge • Make a donation • Download full library